जी. जे. राजा

बनाम

तेजराज सुराना

(2019 की आपराधिक अपील संख्या 1160)

30 जुलाई, 2019

[माननीय न्यायमूर्ति श्री उदय उमेश ललित तथा माननीय न्यायमूर्ति श्री विनीत सरन]

परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 – धारा 143क, जिसे संशोधन अधिनियम, 2018 द्वारा दिनांक 01.09.2018 से प्रविष्ट किया गया – प्रवर्तन का स्वरूप – प्रतिगामी अथवा भावी – दिनांक 04.11.2016 को उत्तरदाता द्वारा परिवाद दायर किया गया, जिसमें यह कथित किया गया कि अपीलकर्ता द्वारा उसके पक्ष में रुपये 20,00,000/- तथा रुपये 15,00,000/- के दो चेक जारी किए गए थे, तथापि उक्त चेक अनादरित हो गए – धारा 143क को अधिनियम में संशोधन अधिनियम, 2018 द्वारा दिनांक 01.09.2018 से प्रविष्ट किया गया – धारा 143क के अनुसार, विचारण न्यायालय ने यह आदेश दिया कि चेक राशि का 20 प्रतिशत अपीलकर्ता द्वारा उत्तरदाता को अंतरिम भरण-पोषण के रूप में दिया जाए तथा अपीलकर्ता को निर्देशित किया कि वह उत्तरदाता को रुपये 7,00,000/- की राशि का भुगतान करे – उच्च न्यायालय ने उक्त आदेश को अनुमोदित किया, किन्तु प्रतिशत को चेक राशि के 20 प्रतिशत से घटाकर 15 प्रतिशत कर दिया – अभिनिर्धारित: धारा 143क की उपधारा (5) यह उपबंधित करती है कि अंतरिम भरण-पोषण की वसूली इस प्रकार की जा सकती है मानो वह धारा 421 दं.प्र.सं. के अधीन अर्थदंड हो – धारा 421 संहिता के अध्याय 32 में स्थित है, जो 'दंडादेशों का निष्पादन, निलंबन, उपशमन तथा रूपांतरण' से संबंधित है – उक्त अध्याय के प्रावधानों की भाषा और संदर्भ से स्पष्ट है कि वे उन मामलों में लागू होते हैं, जहाँ किसी अभियुक्त का दोष निर्धारित किया जाता है और उसे ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है, जो दंडादेश और/या अर्थदंड से दंडनीय हो – उक्त अध्याय का भाग-

ग 'अर्थदंड की वसूली' से संबंधित है तथा इस भाग में स्थित धारा 421 अन्य बातों के साथ यह उपबंधित करती है कि अर्थदंड की वसूली अपराधी की चल संपत्ति के कुर्की अधिपत्र अथवा विक्रय द्वारा की जा सकती है – ऐसे मामले में, जहाँ किसी अभियुक्त के विरुद्ध धारा 143क के अधीन अंतरिम भरण-पोषण का भुगतान करने का आदेश पारित किया गया हो और वह उसका भुगतान करने में असफल रहता है या असमर्थ रहता है, वहाँ धारा 421 के अधीन प्रक्रिया का सहारा लिया जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप अन्य बातों के साथ अंतरिम भरण-पोषण की राशि की वसूली बाध्यकारी कार्यवाही द्वारा इस प्रकार की जा सकती है मानो उक्त राशि भू-राजस्व के बकाया के समान हो – वर्तमान मामले में, परिवाद वर्ष 2016 में दायर किया गया था – अतः अपराध का गठन करने वाला कृत्य वर्ष 2016 तक घटित हो चुका था, जबकि संबंधित उपबंध अर्थात् धारा 143क दिनांक 01.09.2018 से प्रविष्ट किया गया – धारा 143क के प्रविष्ट किए जाने से पूर्व विधि-पुस्तक में ऐसा कोई उपबंध विद्यमान नहीं था, जिसके अंतर्गत किसी अभियुक्त के दोष के उद्घोषण से पूर्व, अथवा संबंधित अपराध में उसकी दोषसिद्धि से पूर्व भी, उसे अंतरिम भरण-पोषण के भुगतान या जमा करने के लिए बाध्य किया जा सके – अतः व्यक्ति को एक नई अक्षमता अथवा दायित्व के अधीन किया जाएगा – धारा 143क की प्रयोज्यता भावी प्रकृति की है और उन मामलों तक सीमित है, जहाँ धारा 138 के अधीन अपराध इसके प्रवर्तन के पश्चात किया गया हो – विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश अपास्त किए जाते हैं – सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम निर्देश के अनुपालन में अपीलकर्ता द्वारा जमा की गई राशि, उस पर उपार्जित ब्याज सहित, अपीलकर्ता को वापस की जाए – दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 – धाराएँ 357 तथा 421 – परक्राम्य लिखत (संशोधन) अधिनियम, 2018 – विधियों का निर्वचन।

अपील स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

1. 1 परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 143क के अवलोकन से यह

प्रकट होता है कि (i) अंतरिम भरण-पोषण चेक की राशि के 20 प्रतिशत से अधिक नहीं होगा; (ii) इसका भुगतान उपधारा (3) के अंतर्गत विनिर्दिष्ट समय के भीतर किया जाएगा; (iii) यदि अभियुक्त बरी हो जाता है, तो परिवादी को निर्देशित किया जाएगा कि वह अभियुक्त को अंतरिम भरण-पोषण की राशि बैंक दर पर ब्याज सहित अदा करे; (iv) उक्त धारा के अधीन देय अंतरिम भरण-पोषण की वसूली इस प्रकार की जा सकती है मानो वह दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 421 के अधीन अर्थदंड हो; तथा (v) यदि अभियुक्त दोषसिद्ध किया जाता है, तो अधिनियम की धारा 138 के अधीन अधिरोपित किए जाने वाले अर्थदंड की राशि या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 357 के अधीन प्रदान किए जाने वाले प्रतिकर की राशि, अंतरिम भरण-पोषण के रूप में अदा या वसूल की गई राशि के अनुसार कम कर दी जाएगी। धारा 143क की उपधारा (5) यह उपबंधित करती है कि अंतरिम भरण-पोषण की वसूली इस प्रकार की जा सकती है मानो वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 421 के अधीन अर्थदंड हो। धारा 421 संहिता के अध्याय 32 में स्थित है, जो *'दंडादेशों का निष्पादन, निलंबन, उपशमन तथा रूपांतरण'* से संबंधित है। उक्त अध्याय के प्रावधानों की भाषा और संदर्भ से यह स्पष्ट है कि वे उन मामलों में लागू होते हैं जहाँ किसी अभियुक्त का दोष निर्धारित किया जाता है और उसे ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है जो दंडादेश और/या अर्थदंड से दंडनीय हो। संहिता की धारा 421 के अनुसार अर्थदंड की वसूली अपराधी की चल संपत्ति के कुर्की अधिपत्र अथवा विक्रय द्वारा, अथवा समाहर्ता को अधिपत्र जारी कर उसे अधिकृत करके, कि वह दोषी की चल या अचल संपत्ति या दोनों से उक्त राशि को भू-राजस्व के बकाया के रूप में वसूल करे, की जा सकती है। [कंडिका 9-11] [916-ई-एच; 917-ए-बी; 918-ए-बी]

1.2 ऐसी स्थिति में, जहाँ किसी अभियुक्त के विरुद्ध अधिनियम की धारा 143क के अधीन अंतरिम भरण-पोषण के भुगतान का आदेश पारित किया गया हो और वह अंतरिम भरण-पोषण की राशि का भुगतान करने में असफल रहता है या असमर्थ होता है, वहाँ धारा 421 के अधीन प्रक्रिया का सहारा लिया जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप अन्य

बातों के साथ अंतरिम भरण-पोषण की राशि की वसूली बाध्यकारी कार्यवाही द्वारा इस प्रकार की जा सकती है मानो उक्त राशि भू-राजस्व के बकाया के समान हो। ऐसी वसूली के लिए विनिर्दिष्ट प्रक्रिया की सीमा और कठोरता राज्य से राज्य में भिन्न हो सकती है, किन्तु सामान्यतः ऐसी प्रक्रिया संबंधित व्यक्ति को बाध्यकारी उपायों के अधीन कर सकती है। वर्तमान मामले में, परिवाद वर्ष 2016 में दायर किया गया था, अर्थात् अपराध का गठन करने वाला कृत्य वर्ष 2016 तक घटित हो चुका था, जबकि संबंधित उपबंध अर्थात् अधिनियम की धारा 143क को विधि-पुस्तक में दिनांक 01.09.2018 से प्रविष्ट किया गया। धारा 143क में निहित उपबंधों के दो आयाम हैं। प्रथम, यह धारा एक दायित्व उत्पन्न करती है, जिसके अंतर्गत किसी अभियुक्त को परिवादी को चेक राशि के 20 प्रतिशत तक का भुगतान करने का आदेश दिया जा सकता है। ऐसा आदेश उस अवस्था में भी पारित किया जा सकता है जब परिवाद का अभी तक निर्णय नहीं हुआ हो और अभियुक्त का दोष अभी तक निर्धारित नहीं किया गया हो। द्वितीय, यह वसूली की व्यवस्था उपलब्ध कराती है, मानो अंतरिम भरण-पोषण भू-राजस्व के बकाया के समान हो। इस प्रकार, यह न केवल एक नया दायित्व अथवा अक्षमता उत्पन्न करती है, बल्कि अभियुक्त को राज्य की व्यवस्था के माध्यम से ऐसे अंतरिम भरण-पोषण की वसूली हेतु बाध्यकारी उपायों के अधीन भी कर देती है, मानो अंतरिम भरण-पोषण भू-राजस्व का बकाया हो। ऐसे बाध्यकारी उपाय, जैसा कि महाराष्ट्र भू-राजस्व संहिता की धारा 183 जैसे उपबंध से स्पष्ट है, कुछ मामलों में अभियुक्त की गिरफ्तारी तथा निरोध का कारण भी बन सकते हैं। [कंडिका 12, 14 एवं 18] [918-बी-सी, ई-जी; 920-एफ-जी]

1.3 अधिनियम में धारा 143क के प्रविष्ट किए जाने से पूर्व विधि-पुस्तक में ऐसा कोई उपबंध विद्यमान नहीं था, जिसके अंतर्गत किसी अभियुक्त के दोष के उद्घोषण से पूर्व, अथवा संबंधित अपराध में उसकी दोषसिद्धि से पूर्व भी, उसे अंतरिम भरण-पोषण के भुगतान या जमा करने के लिए बाध्य किया जा सके। अर्थदंड अथवा प्रतिकर का अधिरोपण

तथा उसकी परिणामी वसूली, चाहे वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 421 की विधि के माध्यम से हो अथवा संहिता की धारा 357 के अधीन, केवल उसी स्थिति में उत्पन्न हो सकती थी जब व्यक्ति को अपराध के लिए दोषी पाया गया हो। यही विधि की स्थिति थी, जिसे अधिनियम में धारा 143 क के प्रवर्तन द्वारा परिवर्तित करने का प्रयास किया गया। अब यह ऐसा दायित्व अधिरोपित करती है कि अभियुक्त के दोष के उद्घोषण या दोषसिद्धि के आदेश से पूर्व भी, राज्य की व्यवस्था की सहायता से, राशि को भू-राजस्व के बकाया के रूप में वसूल करने की प्रक्रिया के माध्यम से, उसे अंतरिम भरण-पोषण का भुगतान करने के लिए बाध्य किया जा सकता है। अतः व्यक्ति को एक नई अक्षमता अथवा दायित्व के अधीन किया जाएगा। इस प्रकार की स्थिति उस स्थिति से पूर्णतः भिन्न है, जो कर्मचारी राज्य बीमा निगम मामला में विचारार्थ उत्पन्न हुई थी। अतः अधिनियम की धारा 143 क की प्रयोज्यता को भावी प्रकृति का माना जाना आवश्यक है और इसे उन मामलों तक सीमित रखा जाएगा, जहाँ धारा 143 क के प्रवर्तन के पश्चात अपराध किए गए हों, ताकि अभियुक्त को ऐसे अंतरिम भरण-पोषण के भुगतान के लिए बाध्य किया जा सके। धारा 143 क का प्रवर्तन भावी माना जाएगा और उक्त धारा 143 क के उपबंध केवल उन्हीं मामलों में लागू अथवा आहूत किए जा सकते हैं, जहाँ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध उक्त धारा 143 क के विधि-पुस्तक में प्रविष्ट किए जाने के पश्चात किया गया हो। परिणामतः, विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश निरस्त किए जाते हैं। अपीलकर्ता द्वारा सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम निर्देश के अनुपालन में जमा की गई राशि, उस पर उपार्जित ब्याज सहित, इस आदेश की तिथि से दो सप्ताह के भीतर अपीलकर्ता को वापस की जाएगी। [कंडिका 20, 22 एवं 24][921-डी-जी; 922-सी, जी; 923-ए-बी]

आयुक्त आयकर (केंद्रीय)-I, नई दिल्ली बनाम वाटिका टाउनशिप प्राइवेट लिमिटेड (2015) 1 एस.सी.सी. 1 : [2014] 12 एस.सी.आर. 1037; *हितेन्द्र विष्णु ठाकुर एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र*

राज्य एवं अन्य **(1994) 4 एस.सी.सी. 602 : [1994] 1 परिशिष्ट एस.सी.आर. 360;** *अनिल कुमार गोयल बनाम किशन चंद कौरा* **(2007) 13 एस.सी.सी. 492 : [2007] 13 एस.सी.आर. 313;** *सुरेन्द्र सिंह देसवाल एवं अन्य बनाम वीरेन्द्र गांधी* **(2019) 8 स्केल 445 – अवलंबित।**

कर्मचारी राज्य बीमा निगम बनाम द्वारका नाथ भार्गव **(1997) 7 एस.सी.सी. 131 : [1997] 3 परिशिष्ट एस.सी.आर. 513 –विशिष्ट।**

<u>नज़ीर संदर्भ</u>

[2014] 12 एस.सी.आर. 1037	अवलंबित	कंडिका 15
[1994] 1 परिशिष्ट एस.सी.आर. 360	अवलंबित	कंडिका 16
[1997] 3 परिशिष्ट एस.सी.आर. 513	विशिष्ट	कंडिका 19
[2007] 13 एस.सी.आर. 313	अवलंबित	कंडिका 21
(2019) 8 स्केल 445	अवलंबित	कंडिका 23

दांडिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: दांडिक अपील संख्या 1160 वर्ष 2019

मद्रास के न्यायिक उच्च न्यायालय द्वारा दांडिक मौलिक याचिका संख्या 3406 वर्ष 2019 में दिनांक 08.02.2019 को पारित निर्णय एवं आदेश से उद्भूत।

विनय नवारे, वरिष्ठ अधिवक्ता (न्यायमित्र), जी. आनंदा सेल्वम, मयिलसामी के., पीवीके देवेन्द्रन, मणिकंदन ए., सुश्री कविता भारद्वाज, निहंगम आर. मौर्य, सुश्री लक्ष्मी राममूर्ति, डॉ. रविन्द्रे एस. चिंगले, महालिंग पांडर्गे, अभिजीत सेनगुप्ता, अधिवक्ता, उपस्थित पक्षकारों के लिए।

न्यायालय का निर्णय **माननीय न्यायमूर्ति श्री उदय उमेश ललित** न्यायमूर्ति द्वारा प्रदत्त किया गया।

1. अनुमति प्रदान की गई।

2. यह अपील, वर्तमान अपीलकर्ता द्वारा प्रस्तुत दांडिक मूल याचिका संख्या 3406 वर्ष 2019 में मद्रास के न्यायिक उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 08.02.2019 को पारित अंतिम आदेश को चुनौती देती है।

3. परक्राम्य लिखत अधिनियम, 1881 की धारा 138 के अधीन परिवाद (जिसे आगे 'अधिनियम' कहा जाएगा) संख्या सी.सी. संख्या 7171 वर्ष 2018 वर्तमान में अपीलकर्ता के विरुद्ध द्वितीय त्वरित विचारण न्यायालय–महानगरीय दंडाधिकारी, एगमोर, चेन्नई के समक्ष लंबित है। परिवाद के अनुसार, अपीलकर्ता द्वारा उत्तरदाता-परिवादी के पक्ष में रुपये 20,00,000/- तथा रुपये 15,00,000/- की राशि के दो चेक जारी किए गए थे, जो धनराशि की अपर्याप्तता के कारण अनादरित हो गए। यह परिवाद दिनांक 04.11.2016 को दायर किया गया था।

4. दिनांक 01.09.2018 से प्रभावी होकर, संशोधन अधिनियम संख्या 20 वर्ष 2018 द्वारा अधिनियम में धारा 143क प्रविष्ट की गई। उक्त धारा का प्रभाव निम्नलिखित है:-

> "**143क. अंतरिम भरण-पोषण का निर्देश देने की शक्ति** – (1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में निहित किसी भी बात के होते हुए भी, धारा 138 के अधीन अपराध का विचारण करने वाला न्यायालय, चेक के आहरणकर्ता को परिवादी को अंतरिम भरण-पोषण का भुगतान करने का आदेश दे सकता है –
>
> (क) संक्षिप्त विचारण या समन वाद में, जहाँ वह परिवाद में किए गए आरोप के प्रति स्वयं को निर्दोष अभिव्यक्त करता है; तथा
>
> (ख) किसी अन्य मामले में, आरोप निर्धारित किए जाने पर।

(2) उपधारा (1) के अधीन अंतरिम भरण-पोषण चेक की राशि के बीस प्रतिशत से अधिक नहीं होगा।

(3) अंतरिम भरण-पोषण का भुगतान उपधारा (1) के अधीन आदेश की तिथि से साठ दिनों के भीतर किया जाएगा, या ऐसे अतिरिक्त अवधि के भीतर, जो तीस दिनों से अधिक नहीं होगी, जैसा कि न्यायालय द्वारा, चेक के आहरणकर्ता द्वारा पर्याप्त कारण दर्शाए जाने पर, निर्देशित किया जा सकता है।

(4) यदि चेक का आहरणकर्ता बरी किया जाता है, तो न्यायालय परिवादी को निर्देश देगा कि वह आहरणकर्ता को अंतरिम भरण-पोषण की राशि, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा प्रकाशित बैंक दर पर, जो संबंधित वित्तीय वर्षों के प्रारंभ में प्रचलित हो, ब्याज सहित, आदेश की तिथि से साठ दिनों के भीतर, या ऐसे अतिरिक्त अवधि के भीतर, जो तीस दिनों से अधिक नहीं होगी, जैसा कि न्यायालय द्वारा, परिवादी द्वारा पर्याप्त कारण दर्शाए जाने पर, निर्देशित किया जा सकता है, वापस करे।

(5) इस धारा के अधीन देय अंतरिम भरण-पोषण की वसूली इस प्रकार की जा सकती है मानो वह दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 421 के अधीन अर्थदंड हो।

(6) धारा 138 के अधीन अधिरोपित अर्थदंड की राशि या दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) की धारा 357 के अधीन प्रदान किए गए प्रतिकर की राशि, इस धारा के अधीन अंतरिम भरण-पोषण के रूप में अदा या वसूल की गई राशि के अनुसार कम कर दी जाएगी।"

5. इसके पश्चात शीघ्र ही, विचारण न्यायालय ने यह आदेश पारित किया कि अधिनियम की धारा 143क के प्रावधानों के अनुसार चेक राशि का 20 प्रतिशत अपीलकर्ता द्वारा उत्तरदाता को *अंतरिम भरण-पोषण* के रूप में प्रदान किया जाए। इस प्रकार, अपीलकर्ता

को उत्तरदाता को रुपये 7,00,000/- की राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया गया।

6. अपीलकर्ता, इससे व्यथित होकर, उच्च न्यायालय में दांडिक मूल याचिका संख्या 3406 वर्ष 2019 दायर की। अपने दिनांक 08.02.2019 के आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 143क के अधीन अंतरिम भरण-पोषण प्रदान किए जाने वाले आदेश में कोई अवैधता या त्रुटि नहीं पाई, किन्तु चेक राशि के 20 प्रतिशत से प्रतिशत को घटाकर 15 प्रतिशत कर दिया।

7. उच्च न्यायालय का आदेश वर्तमान में चुनौती के अधीन है। नोटिस जारी करते समय अपीलकर्ता को निर्देशित किया गया कि वह उच्च न्यायालय द्वारा निर्देशित राशि विचारण न्यायालय में जमा करे। यह भी निर्देशित किया गया कि जमा किए जाने पर, विचारण न्यायालय उक्त राशि को सावधि जमा में निवेश करे तथा आगे के आदेशों तक उक्त राशि उत्तरदाता को न दी जाए। चूँकि उत्तरदाता को नोटिस की सेवा किए जाने के बावजूद वह उपस्थित नहीं हुआ, इस न्यायालय ने अपने दिनांक 01.07.2019 के आदेश द्वारा श्री विनय नवारे, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता से अनुरोध किया कि वे *न्यायमित्र* के रूप में इस न्यायालय की सहायता करें।

8. हमने अपीलकर्ता के लिए विद्वान अधिवक्ता श्री जी. आनंदा सेल्वम तथा न्यायमित्र को सुना।

9. धारा 143क के अवलोकन से यह प्रकट होता है कि (i) अंतरिम भरण-पोषण चेक की राशि के 20 प्रतिशत से अधिक नहीं होगा; (ii) इसका भुगतान उपधारा (3) के अंतर्गत विनिर्दिष्ट समय के भीतर किया जाएगा; (iii) यदि अभियुक्त बरी हो जाता है, तो परिवादी को निर्देशित किया जाएगा कि वह अभियुक्त को अंतरिम भरण-पोषण की राशि बैंक दर पर ब्याज सहित अदा करे; (iv) उक्त धारा के अधीन देय अंतरिम भरण-पोषण की वसूली इस प्रकार की जा सकती है मानो वह दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 421 के अधीन अर्थदंड हो; तथा (v) यदि अभियुक्त दोषसिद्ध किया जाता है, तो अधिनियम की धारा 138 के

अधीन अधिरोपित किए जाने वाले अर्थदंड की राशि या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 357 के अधीन प्रदान किए जाने वाले प्रतिकर की राशि, अंतरिम भरण-पोषण के रूप में अदा या वसूल की गई राशि के अनुसार कम कर दी जाएगी।

10. चूँकि धारा 143क की उपधारा (5) यह उपबंधित करती है कि अंतरिम भरण-पोषण की वसूली इस प्रकार की जा सकती है मानो वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 421 के अधीन अर्थदंड हो, अतः उक्त धारा 421 पर भी इस चरण पर विचार किया जाना आवश्यक है। धारा 421 संहिता के अध्याय 32 में स्थित है, जो *'दंडादेशों का निष्पादन, निलंबन, उपशमन तथा रूपांतरण'* से संबंधित है। उक्त अध्याय के प्रावधानों की भाषा और संदर्भ से यह स्पष्ट है कि वे उन मामलों में लागू होते हैं जहाँ किसी अभियुक्त का दोष निर्धारित किया जाता है और उसे ऐसे अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है जो दंडादेश और/या अर्थदंड से दंडनीय हो। अध्याय का भाग-ग 'अर्थदंड की वसूली' से संबंधित है तथा उक्त भाग-ग में स्थित धारा 421 का प्रभाव निम्नलिखित है:-

> "**421. अर्थदंड की वसूली हेतु अधिपत्र**– (1) जब किसी अपराधी को अर्थदंड का भुगतान करने के लिए दंडित किया गया हो, तब दंडादेश पारित करने वाला न्यायालय अर्थदंड की वसूली के लिए निम्नलिखित में से किसी एक या दोनों उपायों द्वारा कार्यवाही कर सकता है, अर्थात् वह –
>
> (क) अपराधी की किसी चल संपत्ति के कुर्की एवं विक्रय द्वारा राशि की वसूली हेतु अधिपत्र जारी कर सकता है;
>
> (ख) जिला के समाहर्ता को अधिपत्र जारी कर उसे अधिकृत कर सकता है कि वह दोषकर्ता की चल या अचल संपत्ति, अथवा दोनों से उक्त राशि को भू-राजस्व के बकाया के रूप में वसूल करे।
>
> परंतु यह उपबंधित है कि यदि दंडादेश में यह निर्देशित किया गया हो कि अर्थदंड का भुगतान न करने की स्थिति में अपराधी को कारावास भुगतना

होगा, और यदि ऐसे अपराधी ने उक्त अवहेलना के कारण संपूर्ण कारावास भुगत लिया हो, तो कोई भी न्यायालय ऐसा अधिपत्र जारी नहीं करेगा, जब तक कि वह लिखित रूप में विशेष कारण अंकित करते हुए इसे आवश्यक न समझे, अथवा जब तक उसने धारा 357 के अधीन अर्थदंड से व्यय या प्रतिकर के भुगतान का आदेश न दिया हो।

(2) राज्य सरकार ऐसे नियम बना सकती है, जो उपधारा (1) के खंड (क) के अधीन जारी किए गए अधिपत्रों के निष्पादन की विधि को विनियमित करें, तथा ऐसे किसी अधिपत्र के निष्पादन में कुर्क की गई किसी संपत्ति के संबंध में अपराधी के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किए गए दावों के संक्षिप्त निर्धारण के लिए प्रावधान करें।

(3) जहाँ न्यायालय उपधारा (1) के खंड (ख) के अधीन समाहर्ता को अधिपत्र जारी करता है, वहाँ समाहर्ता उक्त राशि की वसूली भू-राजस्व के बकाया की वसूली से संबंधित विधि के अनुसार करेगा, मानो ऐसा अधिपत्र उक्त विधि के अधीन जारी किया गया प्रमाणपत्र हो:

परंतु ऐसा कोई अधिपत्र अपराधी की गिरफ्तारी या कारागार में निरोध द्वारा निष्पादित नहीं किया जाएगा।"

11. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 421 के अनुसार अर्थदंड की वसूली अपराधी की चल संपत्ति के कुर्की अथवा विक्रय के अधिपत्र द्वारा, अथवा समाहर्ता को अधिपत्र जारी कर उसे अधिकृत करते हुए, कि वह दोषकर्ता की चल या अचल संपत्ति अथवा दोनों से उक्त राशि को भू-राजस्व के बकाया के रूप में वसूल करे, की जा सकती है।

12. अतः यह स्पष्ट है कि ऐसी स्थिति में, जहाँ किसी अभियुक्त के विरुद्ध अधिनियम की धारा 143क के अधीन अंतरिम भरण-पोषण के भुगतान का आदेश पारित किया गया हो और वह अंतरिम भरण-पोषण की राशि का भुगतान करने में असफल रहता है

या असमर्थ होता है, वहाँ धारा 421 के अधीन प्रक्रिया का सहारा लिया जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप अन्य बातों के साथ अंतरिम भरण-पोषण की राशि की वसूली बाध्यकारी कार्यवाही द्वारा इस प्रकार की जा सकती है मानो उक्त राशि भू-राजस्व के बकाया के समान हो। ऐसी वसूली के लिए विनिर्दिष्ट प्रक्रिया की सीमा और कठोरता राज्य से राज्य में भिन्न हो सकती है, किन्तु सामान्यतः ऐसी प्रक्रिया संबंधित व्यक्ति को बाध्यकारी उपायों के अधीन कर सकती है।

13. उदाहरणार्थ, महाराष्ट्र भू-राजस्व संहिता, 1966 की धारा 183 के अनुसार, यदि भू-राजस्व के भुगतान में चूक होती है, तो संबंधित व्यक्ति को समाहर्ता या तहसीलदार के कार्यालय में 10 दिनों के लिए अभिरक्षा में गिरफ्तार कर निरुद्ध किया जा सकता है, जब तक कि देय राजस्व के बकाया का भुगतान, दंड या ब्याज तथा गिरफ्तारी और मांग सूचना-पत्र के व्यय के साथ-साथ निरोध के दौरान उसके भरण-पोषण के व्यय सहित, न कर दिया जाए।

14. वर्तमान मामले में, परिवाद वर्ष 2016 में दायर किया गया था, अर्थात् अपराध का गठन करने वाला कृत्य वर्ष 2016 तक घटित हो चुका था, जबकि संबंधित उपबंध अर्थात् अधिनियम की धारा 143क को विधि-पुस्तक में दिनांक 01.09.2018 से प्रविष्ट किया गया। अतः उत्पन्न होने वाला प्रश्न यह है कि क्या अधिनियम की धारा 143क का प्रवर्तन प्रतिगामी है और क्या इसे उन मामलों में लागू किया जा सकता है, जहाँ अधिनियम की धारा 138 के अधीन दंडनीय अपराध, धारा 143क के प्रवर्तन से बहुत पूर्व किए गए थे। वर्तमान मामले में हम केवल इस प्रश्न से संबंधित हैं कि उक्त धारा 143क की प्रयोज्यता अधिनियम की धारा 138 के अधीन उन अपराधों पर है या नहीं, जो उक्त धारा 143क के प्रविष्ट किए जाने से पूर्व किए गए थे।

15. आयकर अधिनियम, 1961 में प्रविष्ट धारा 158-बीई के संदर्भ में *'विधायन की प्रतिगामिता'* से संबंधित सामान्य सिद्धांतों पर विचार करते हुए, इस न्यायालय द्वारा

आयुक्त आयकर (केंद्रीय)-I, नई दिल्ली बनाम वाटिका टाउनशिप प्राइवेट लिमिटेड,(2015) 1 एससीसी 1 में निम्नलिखित प्रकार से अभिव्यक्त किया गया था:-

> "**28.** विधायन की व्याख्या किस प्रकार की जानी है, इसका मार्गदर्शन करने वाले विभिन्न नियमों में से एक स्थापित नियम यह है कि जब तक कोई विपरीत आशय प्रकट न हो, यह अनुमान किया जाता है कि किसी विधायन का उद्देश्य प्रतिगामी प्रवर्तन देना नहीं है। इस नियम के पीछे का विचार यह है कि वर्तमान विधि ही वर्तमान क्रियाकलापों का संचालन करे। आज पारित विधि भूतकाल की घटनाओं पर लागू नहीं हो सकती। यदि हम आज कुछ करते हैं, तो हम उसे आज की प्रभावी विधि को ध्यान में रखकर करते हैं, न कि भविष्य में उसके प्रतिगामी समायोजन के आधार पर। विधि के स्वरूप में हमारा विश्वास इस मूल आधार पर टिका है कि प्रत्येक व्यक्ति को विद्यमान विधि पर आश्रित होकर अपने कार्यों का विन्यास करने का अधिकार है और उसे यह नहीं होना चाहिए कि उसकी योजनाएँ प्रतिगामी रूप से विचलित कर दी जाएँ। विधि का यह सिद्धांत '*विधि आगे की ओर देखती है, पीछे की ओर नहीं*' के नाम से जाना जाता है, जिसका अर्थ है कि विधि आगे की ओर देखती है, पीछे की ओर नहीं। जैसा कि *फिलिप्स बनाम एयरे,(1870) एलआर 6 क्यूबी 1* में अभिव्यक्त किया गया था, प्रतिगामी विधायन उस सामान्य सिद्धांत के प्रतिकूल है कि वह विधायन जिसके द्वारा मानव आचरण का विनियमन किया जाना है, जब प्रथम बार भविष्य के कार्यों से संबंधित होने के लिए प्रविष्ट किया जाता है, तो उसे उस समय विद्यमान विधि पर विश्वास करके किए गए भूतकालीन लेन-देन के स्वरूप को परिवर्तित नहीं करना चाहिए।"

16. इसी प्रकार, आतंकवादी एवं विध्वंसक गतिविधियाँ (निवारण) अधिनियम,

1987 की धारा 20(4)(ख) के परिणामस्वरूप, जिसके अंतर्गत चालान या आरोप पत्र दाखिल करने की अवधि का विस्तार किया जा सकता था, संहिता के प्रावधानों के परिवर्तित अनुप्रयोग के प्रभाव पर विचार करते हुए, इस न्यायालय ने ***हितेन्द्र विष्णु ठाकुर एवं अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य,(1994) 4 एससीसी 602*** में संबंधित उपबंधों के प्रतिगामी प्रवर्तन के प्रश्न पर निम्नलिखित रूप से विचार किया:-

> "26. निर्दिष्ट न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि संशोधन प्रतिगामी रूप से प्रभावी होगा और उन लंबित मामलों पर लागू होगा जिनमें संशोधन अधिनियम के प्रवर्तन की तिथि तक अनुसंधान पूर्ण नहीं हुआ था तथा उस समय तक न्यायालय में चालान प्रस्तुत नहीं किया गया था। इस न्यायालय द्वारा विभिन्न मामलों में स्थापित विधि से, यद्यपि उदाहरणात्मक किन्तु पूर्णतः समावेशी नहीं, ऐसे सिद्धांत जो किसी संशोधन अधिनियम के क्षेत्र एवं परिधि तथा उसके प्रतिगामी प्रवर्तन के संबंध में उभरकर सामने आते हैं, निम्नलिखित रूप में संकलित किए जा सकते हैं:
>
> (i) ऐसा विधान जो मौलिक अधिकारों को प्रभावित करता है, सामान्यतः भावी प्रवर्तन का माना जाता है, जब तक कि उसे स्पष्ट रूप से अथवा आवश्यक आशय द्वारा प्रतिगामी न बनाया गया हो; जबकि ऐसा विधान जो मात्र प्रक्रिया को प्रभावित करता है, जब तक कि ऐसी व्याख्या पाठ्य रूप से असंभव न हो, सामान्यतः अपने अनुप्रयोग में प्रतिगामी माना जाता है, किन्तु उसे विस्तारित अर्थ नहीं दिया जाना चाहिए और उसे उसकी स्पष्ट रूप से परिभाषित सीमाओं तक ही कठोरतापूर्वक सीमित रखा जाना चाहिए।
>
> (ii) मंच तथा परिसीमा से संबंधित विधि प्रकृत्या प्रक्रियात्मक होती है, जबकि वाद हेतु के अधिकार तथा अपील के अधिकार से संबंधित विधि, यद्यपि उपचारात्मक हो, तथापि मौलिक प्रकृति की होती है।

(iii) प्रत्येक वादकारी को मौलिक विधि में निहित अधिकार प्राप्त होता है, किन्तु प्रक्रियात्मक विधि में ऐसा कोई अधिकार विद्यमान नहीं होता।

(iv) सामान्यतः किसी प्रक्रियात्मक विधान को प्रतिगामी रूप से लागू नहीं किया जाना चाहिए, जहाँ उसका परिणाम पूर्व में संपन्न लेन-देन के संबंध में नए दायित्वों या अक्षमताओं का सृजन करना अथवा नई कर्तव्यों का आरोपण करना हो।

(v) ऐसा विधान जो न केवल प्रक्रिया में परिवर्तन करता है, बल्कि नए अधिकारों और दायित्वों का सृजन भी करता है, उसे भावी प्रवर्तन वाला माना जाएगा, जब तक कि अन्यथा स्पष्ट रूप से अथवा आवश्यक निहितार्थ द्वारा उपबंधित न किया गया हो।"

17. इस न्यायालय द्वारा ***हितेन्द्र विष्णु ठाकुर*** में संकलित *चतुर्थ* एवं *पंचम* सिद्धांत वर्तमान तथ्यात्मक स्थिति पर उपयुक्त रूप से लागू होते हैं।

18. धारा 143क में निहित उपबंधों के दो आयाम हैं। प्रथम, यह धारा एक दायित्व उत्पन्न करती है, जिसके अंतर्गत किसी अभियुक्त को परिवादी को चेक राशि के 20 प्रतिशत तक का भुगतान करने का आदेश दिया जा सकता है। ऐसा आदेश उस अवस्था में भी पारित किया जा सकता है जब परिवाद का अभी तक निर्णय नहीं हुआ हो और अभियुक्त का दोष अभी तक निर्धारित नहीं किया गया हो। द्वितीय, यह वसूली की व्यवस्था उपलब्ध कराती है, मानो अंतरिम भरण-पोषण भू-राजस्व के बकाया के समान हो। इस प्रकार, यह न केवल एक नया दायित्व अथवा अक्षमता उत्पन्न करती है, बल्कि अभियुक्त को राज्य की व्यवस्था के माध्यम से ऐसे अंतरिम भरण-पोषण की वसूली हेतु बाध्यकारी उपायों के अधीन भी कर देती है, मानो अंतरिम भरण-पोषण भू-राजस्व का बकाया हो। ऐसे बाध्यकारी उपाय, जैसा कि महाराष्ट्र भू-राजस्व संहिता की धारा 183 जैसे उपबंध से स्पष्ट है, कुछ मामलों में अभियुक्त की गिरफ्तारी तथा निरोध का कारण भी बन सकते हैं।

19. हमें इस चरण पर इस न्यायालय के ***कर्मचारी राज्य बीमा निगम बनाम द्वारका नाथ भार्गव,(1997) 7 एससीसी 131*** में दिए गए निर्णय का संदर्भ लेना आवश्यक है, जिसमें कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 में दिनांक 28.01.1968 से प्रविष्ट धारा 45ख के उपबंधों को प्रक्रियात्मक माना गया था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उसका प्रतिगामी प्रवर्तन हो सकता है। उक्त धारा 45ख निम्नलिखित है:-

> "**45ख. अंशदान की वसूली–** इस अधिनियम के अधीन देय कोई भी अंशदान भू-राजस्व के बकाया के रूप में वसूल किया जा सकता है।"
>
> प्रश्न यह था कि उक्त धारा 45ख में विनिर्दिष्ट वसूली की विधि क्या उन राशियों के संबंध में भी लागू की जा सकती है, जो दिनांक 27.01.1967 तथा 24.01.1968 को देय हो चुकी थीं, अर्थात् उस समय जब उक्त धारा 45ख विधि-पुस्तक में प्रविष्ट नहीं की गई थी। बकाया राशि को भू-राजस्व के बकाया के रूप में वसूल किए जाने को स्वीकार करते हुए यह अभिव्यक्त किया गया कि "यह विवादित नहीं है और विवादित किया भी नहीं जा सकता कि प्रश्नगत अंशदान निरंतर देय रहे थे और उत्तरदाता द्वारा उनका भुगतान नहीं किया गया था।"

20. यह कहा जाना आवश्यक है कि अधिनियम में धारा 143क के प्रविष्ट किए जाने से पूर्व विधि-पुस्तक में ऐसा कोई उपबंध विद्यमान नहीं था, जिसके अंतर्गत किसी अभियुक्त के दोष के उद्घोषण से पूर्व, अथवा संबंधित अपराध में उसकी दोषसिद्धि से पूर्व भी, उसे अंतरिम भरण-पोषण के भुगतान या जमा करने के लिए बाध्य किया जा सके। अर्थदंड अथवा प्रतिकर का अधिरोपण तथा उसकी परिणामी वसूली, चाहे वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 421 की विधि के माध्यम से हो अथवा संहिता की धारा 357 के अधीन, केवल उसी स्थिति में उत्पन्न हो सकती थी जब व्यक्ति को अपराध के लिए दोषी पाया गया हो। यही विधि की स्थिति थी, जिसे अधिनियम में धारा 143क के प्रवर्तन द्वारा परिवर्तित करने का

प्रयास किया गया। अब यह ऐसा दायित्व अधिरोपित करती है कि अभियुक्त के दोष के उद्घोषण या दोषसिद्धि के आदेश से पूर्व भी, राज्य की व्यवस्था की सहायता से, राशि को भू-राजस्व के बकाया के रूप में वसूल करने की प्रक्रिया के माध्यम से, उसे अंतरिम भरण-पोषण का भुगतान करने के लिए बाध्य किया जा सकता है। अतः व्यक्ति को एक नई अक्षमता अथवा दायित्व के अधीन किया जाएगा। इस प्रकार की स्थिति उस स्थिति से पूर्णतः भिन्न है, जो कर्मचारी राज्य बीमा निगम प्रकरण,(1997) 7 एससीसी 131 में विचारार्थ उत्पन्न हुई थी।

21. यद्यपि कुछ भिन्न संदर्भ में उत्पन्न हुआ, तथापि अधिनियम में संशोधन अधिनियम संख्या 55 वर्ष 2002 द्वारा प्रविष्ट धारा 142(ख) के परंतुक, जिसके अंतर्गत अब धारा 142(ख) के अधीन निर्धारित अवधि से परे दायर परिवाद के संबंध में भी संज्ञान लिया जा सकता था, को इस न्यायालय द्वारा ***अनिल कुमार गोयल बनाम किशन चंद कौरा,(2007) 13 एससीसी 492*** में भावी प्रवर्तन वाला माना गया। यह अभिव्यक्त किया गया कि:-

> "10. अधिनियम संख्या 55 वर्ष 2002 द्वारा धारा 142(ख) में किए गए संशोधन में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह अभिप्राय हो कि उसे प्रतिगामी रूप से प्रभावी किया जाना था। वास्तव में यह उत्तरदाता का कथन भी नहीं था। स्पष्टतः, जब परिवाद दिनांक 28-11-1998 को दायर किया गया था, तब उत्तरदाता यह पूर्वानुमान नहीं कर सकता था कि भविष्य में ऐसा कोई संशोधन अधिनियमित किया जाएगा, जो पर्याप्त कारण दर्शाए जाने पर परिसीमा की अवधि के विस्तार का उपबंध करेगा।"

22. हमारे मत में, अतः अधिनियम की धारा 143क की प्रयोज्यता को भावी प्रकृति का माना जाना आवश्यक है और इसे उन मामलों तक सीमित रखा जाएगा, जहाँ धारा 143क के प्रवर्तन के पश्चात अपराध किए गए हों, ताकि अभियुक्त को ऐसे अंतरिम भरण-पोषण के भुगतान के लिए बाध्य किया जा सके।

23. तथापि, हमें इस न्यायालय के निर्णय ***सुरेन्द्र सिंह देसवाल एवं अन्य बनाम वीरेन्द्र गांधी, (2019) 8 स्केल 445*** का भी संदर्भ लेना आवश्यक है, जिसमें अधिनियम की धारा 148, जिसे उसी संशोधन अधिनियम संख्या 20 वर्ष 2018 द्वारा दिनांक 01.09.2018 से प्रविष्ट किया गया था, को इस न्यायालय द्वारा प्रतिगामी प्रवर्तन वाला माना गया। अधिनियम की धारा 143क के विपरीत, जो विचारण चरण पर लागू होती है, अर्थात् अभियुक्त के दोष के उद्घोषण या दोषसिद्धि के आदेश से पूर्व ही, अधिनियम की धारा 148 अपीलीय चरण पर लागू होती है, जहाँ अभियुक्त को अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध के लिए पहले ही दोषी पाया जा चुका होता है। यह उल्लेखनीय है कि अधिनियम की धारा 148 में ऐसा कोई उपबंध नहीं है जो धारा 143क की उपधारा (5) के समान हो। तथापि, वस्तुतः धारा 143क की उपधारा (5) के समान किसी उपबंध की आवश्यकता भी नहीं थी, क्योंकि संहिता की धाराएँ 421 तथा 357, जो दोषसिद्धि के पश्चात लागू होती हैं, ऐसे आवश्यकताओं का समुचित रूप से निर्वहन करने के लिए पर्याप्त हैं। इस अर्थ में, उक्त धारा 148 विद्यमान तंत्र एवं पूर्व से अस्तित्व में विद्यमान सिद्धांतों पर आधारित है और अधिनियम की धारा 143क द्वारा सृजित प्रकृति की कोई नवीन अक्षमता उत्पन्न नहीं करती। अतः इस न्यायालय का निर्णय *सुरेन्द्र सिंह देसवाल* प्रकरण भिन्न आधार पर स्थित है।

24. अंततः, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि धारा 143क का प्रवर्तन भावी है और उक्त धारा 143क के उपबंध केवल उन्हीं मामलों में लागू अथवा आहूत किए जा सकते हैं, जहाँ अधिनियम की धारा 138 के अधीन अपराध उक्त धारा 143क के विधि-पुस्तक में प्रविष्ट किए जाने के पश्चात किया गया हो। परिणामतः, विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश निरस्त किए जाने योग्य हैं। अपीलकर्ता द्वारा इस न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम निर्देश के अनुपालन में जमा की गई राशि, उस पर उपार्जित ब्याज सहित, इस आदेश की तिथि से दो सप्ताह के भीतर अपीलकर्ता को वापस की जाएगी।

25. उपर्युक्त शर्तों के अनुसार अपील स्वीकार की जाती है।

26. अंत में, हम न्यायमित्र के रूप में दी गई सहायता के लिए विद्वान श्री विनय नवारे के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

दिव्या पांडेय　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　　अपील स्वीकार की गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।